माध्यन्दिनीय यजुर्वेद एवं सामवेदकी पाठ-परम्परा

(गोलोकवासी प्रो० डॉ० श्रीगोपालचन्द्रजी मिश्र, भूतपूर्व वेदविभागाध्यक्ष वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय)

पूर्वकालमें हमारे तपःपूत साक्षात्कृतधर्मा ऋषि-महर्षियोंने अनन्त कष्ट सहकर भी जिस महान् वेद-साहित्यकी स्वाध्याय-परम्परा अक्षुण्ण रखा, उसीका फल है कि आज हम कुछ थोड़ा-बहुत उस वेदभगवान्का भाग यथावत् सुरक्षित पा रहे हैं, किंतु आज हमारा समाज अपने धर्मके मूलभूत वेद-साहित्यकी उपेक्षा कर तत्-शाखा-साहित्य (वेदके अङ्ग-उपाङ्ग)-में ही अलंबुद्धि मानकर वेद-साहित्यसे प्रायः उदासीन हो गया है। सम्प्रति यह सनातन-धर्मका प्राण एवं ज्ञान-भण्डार वेद-साहित्य क्षत्रिय, वैश्य तो क्या ब्राह्मण जातिके लिये भी प्रायः अज्ञात-सा होकर दिनानुदिन केवल कुछ विशिष्ट स्थान एवं पुस्तकालयोंमें दर्शनीय मात्र अवस्थामें पहुँच रहा है, यदि यही अवस्था रही तो इस धर्ममूल वेद-साहित्यका केवल नाम ही शेष रह जायगा, वर्तमान समयमें इसका पठन-पाठन तो क्या शिक्षितोंमें उदात्तादि स्वरोंका एवं उनकी हस्तमुद्राओंका यथावत् ज्ञान भी लुप्तप्राय होता जा रहा है। अतः इस परिस्थितिमें द्विजमात्र (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) जो कि इसके अधिकारी हैं और विशेष करके ब्राह्मण-समाजको इस परम्पराकी रक्षा करनेके लिये अङ्गोंसहित वेदाध्ययनपर अवश्य ध्यान देना एवं यत्न करना चाहिये, क्योंकि कहा भी गया है—

'ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च।'

तथा—

वेदमेवाभ्यसेन्नित्यं यथाकालमतन्द्रितः।
तं ह्यस्याहुः परं धर्ममुपधर्मोऽन्य उच्यते॥

(मनु० ४। १४७)

अर्थात् आलस्यरहित होकर यथासमय वेदका प्रतिदिन अभ्यास करना चाहिये, क्योंकि यही मुख्य धर्म है; अन्य धर्म तो गौण हैं।

वेदपाठका फल

स्तुता मया वरदा वेदमाता प्र चोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।
मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्॥

(अथर्ववेद १९। ७१। १)

तात्पर्य यह कि यथेच्छ वर देनेवाली वेदवाणी, अपने स्वाध्याय करने (पाठ करने)-वाले द्विजमात्रको पाप (दुःख)-रहित करती हुई पूर्ण आयु, रोगादि क्लेश-रहित जीवन, पुत्र-पौत्रादि संतान, कीर्ति (यश), विपुल धन, बल एवं तेज आदि इस लोकके सम्पूर्ण सुख देती हुई अन्तमें ब्रह्मज्ञान प्राप्त कराकर ब्रह्मलोकका अनन्त सुख प्राप्त कराती है।

वेदपाठ-विधि

वेदपाठमें नीचे लिखे नियमोंपर ध्यान रखना चाहिये—वेदमन्त्रोच्चारणके लिये प्रसन्न-मन एवं विनीतभावसे हस्तमुद्रापर दृष्टि रखते हुए चित्रमें दिखाये गये ढंगके

चित्र सं० १

अनुसार शुद्ध आसनपर स्वस्तिक या पद्मासनसे बैठकर बायें हाथकी मुट्ठीपर दाहिना हाथ रख सब अँगुलियाँ मिलाकर गोकर्णाकृति हाथ रखते हुए बैठना चाहिये।

वेदपाठ करनेमें न बहुत शीघ्रता करे, न मन्दता करे। शान्तभावसे स्वरको बिना ऊँचा-नीचा किये एक लयसे उच्चारण करे। मन्त्रपाठ आरम्भ करते समय प्रथम 'हरिः ॐ' का उच्चारण करे।

शुक्ल यजुर्वेदकी माध्यन्दिनीय शाखामें उदात्तादि स्वरोंका हाथसे बोधन कराया जाता है। इन उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि स्वरोंका उच्चारण तथा हस्तमुद्रा दोनों एक साथ रहनी चाहिये। क्योंकि लिखा है—

'हस्तभ्रष्टः स्वराद् भ्रष्टो न वेदफलमश्नुते।'

हस्त-स्वरकी बड़ी महिमा है, इसके ज्ञानके बिना वेदपाठका यथार्थ फल प्राप्त नहीं होता। आचार्योंने कहा है कि—

ऋचो यजूंषि सामानि हस्तहीनानि यः पठेत्।
अनृचो ब्राह्मणस्तावद् यावत् स्वारं न विन्दति॥

जो दिखावामात्रके लिये अर्थात् स्वरज्ञानके बिना हस्त-स्वरका प्रदर्शन करता है, वह पापका भागी होता है।

हस्तहीनं तु योऽधीते स्वरवर्णविवर्जितम्।
ऋग्यजुःसामभिर्दग्धो वियोनिमधिगच्छति॥

हाथको ठीक गोकर्णाकृति रखना चाहिये।

उदात्त स्वरका कोई चिह्न नहीं होता, स्वरितमें वर्णके ऊपर खड़ी रेखा होती है तथा अनुदात्तमें वर्णके नीचे तिरछी रेखा होती है।

उदात्तमें हाथ मस्तकतक तथा स्वरितमें नासिकाग्र या मुखकी सीधमें एवं अनुदात्तमें हृदयकी सीधमें हाथ जाना चाहिये। जात्यादि स्वरोंमें हाथ तिरछा जाना चाहिये। साधारणतया हाथ उदात्तमें ऊपर (कन्धेके पास), स्वरितमें मध्यमें तथा अनुदात्तमें नीचे रहना चाहिये।

माध्यन्दिनीय यजुर्वेदमें वर्णोच्चारण-सम्बन्धी कुछ नियम

१-'ऋ' कारका उच्चारण 'रे' कारके समान करना चाहिये।

२-अनुस्वारके भेद—

१-जहाँपर 'ꣳ' यह चिह्न हो, वहाँपर लघु (एकमात्रिक) अनुस्वार जानना।

२-उपर्युक्त चिह्नके बाद यदि संयोग (संयुक्त वर्ण) हो तो गुरु जानना।

३-'ꣴ' चिह्न हो तो वह भी दीर्घसंज्ञक है।

उपर्युक्त चिह्नित अनुस्वारका उच्चारण **'गुं'** इस ध्वनिसे (लघु या दीर्घानुसार) होना चाहिये, **'ग्वं'** रूपसे नहीं।

४-विसर्गका उच्चारण हकारके समान होता है, पर इसको हकार नहीं मानना चाहिये। यथा—

'दे॒वो वं÷ सवि॒ता' हकारके समान उच्चारण होगा।
'दे॒वी' हिकारके समान ,, ,,
'आखु॒स्ते प॒शु' हुकारके समान उच्चारण होगा।
'अग्नेः' हेकारके समान ,, ,,
'बा॒ह्वोः' होकारके समान उच्चारण होगा।
'स्वैः' हिकारके समान ,, ,,
'द्यौः' हुकारके समान ,, ,,

५-'रंग' अर्थात् अर्धानुस्वारके दो भेद हैं, यथा—

'शत्रूँ १॥', **'लोकाँ** २॥' (इसमें ह्रस्व या दीर्घ रंगका उच्चारण पूर्वस्वरके साथ सानुनासिक होता है)।

६-जहाँ दो स्वरके मध्य 'ऽ' चिह्न हो वहाँ एक मात्रा काल विराम होता है।

७-जहाँ यकारके पेटमें तिरछी रेखा हो वहाँ जकारके समान उसका उच्चारण होता है।

८-हल् रकारका उच्चारण—

श, ष और ह वर्णोंके पूर्वके हल् रकारको 'रे' उच्चारण करना।

९-मूर्धन्य षकारका उच्चारण—

यदि ट=वर्ग= (ट ठ ड ढ ण)-से युक्त न हो तो क-वर्गीय 'ख' कारके समान उच्चारण होता है।

१०-ज्ञकारका उच्चारण 'ज्ञ'= ('ज् ञ')—मिश्रितके समान होना चाहिये, महाराष्ट्रीय सम्प्रदायमें **'ग्न्य'** भी कहा जाता है।

माध्यन्दिनीय यजुर्वेदमें प्रयुक्त विशेष चिह्न—

उदात्त—चिह्नरहित होता है—क
स्वरित—वर्णके ऊपर खड़ी रेखा—क॑ ।
अनुदात्त—वर्णके नीचे तिरछी रेखा—ख॒
अनुस्वार ह्रस्व—ꣳ
अनुस्वार दीर्घ या ꣴ.
विसर्ग उदात्तके आगे—
विसर्ग अनुदात्तके आगे—
मध्यावर्ती स्वरित— L या ४
अर्धन्युब्ज तथा पूर्णन्युब्ज— ᵚ

उदात्तादि स्वरोंकी मुद्राओंका विवरण

उदात्तस्वरके दो भेद—

उदात्तस्वरके मुख्यरूपसे दो भेद हैं—'ऊर्ध्वगामी' और 'वामगामी' उदात्तवर्णका परिचायक कोई चिह्न नहीं होता।

प्रथम—

(क) स्वरित (ऊर्ध्व रेखा-चिह्नित) वर्णसे पूर्व जो वर्ण चिह्नरहित हो तो हाथ ऊपर जायगा।

उदाहरण—**'आहमजानि'** (रुद्री १। १)

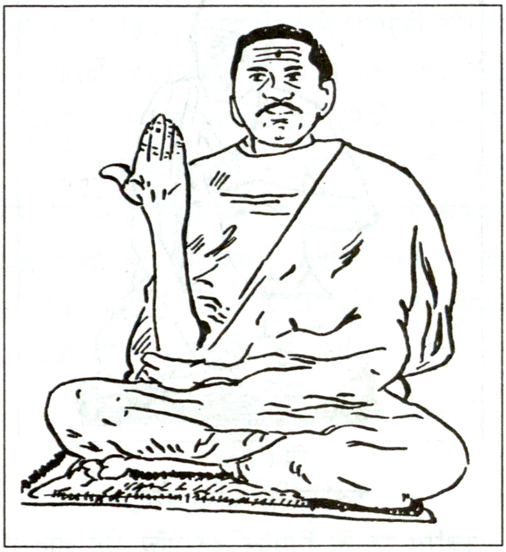

चित्र सं० २

(ख) न्युब्ज चिह्नवाले स्वरितसे आगे और ऊर्ध्व रेखायुक्त स्वरितसे पूर्व जो वर्ण चिह्नरहित हो तो हाथ ऊपर जायगा।

उदाहरण—**'बृहत्युष्णिहा'** (रुद्री १। २)

द्वितीय—

वामगामी उदात्तके तीन अवान्तर भेद—

(क) दो अनुदात्तोंके मध्यमें उदात्त (चिह्नरहित वर्ण) हो तो हाथ अपनी बाँयी ओर जायगा।

उदाहरण—**'गायत्री त्रिष्टुब्ज०'** (रुद्री १। २)

(ख) वामगामी उदात्त—

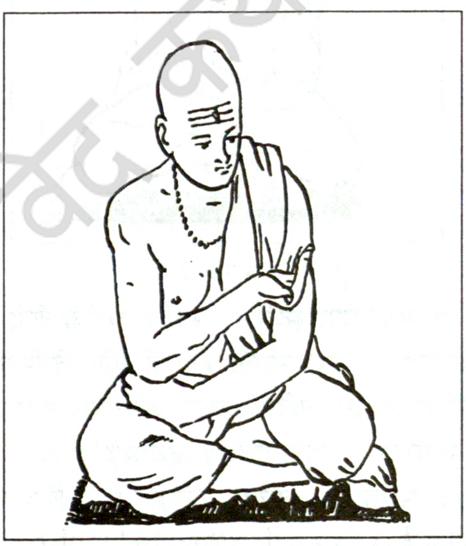

चित्र सं० ३

मन्त्रके मध्यके निश्चित अवसान या समाप्तिके अवसानके चिह्नरहित वर्ण यदि अनुदात्तसे परे तथा अग्रिम मन्त्रांश अनुदात्तसे प्रारम्भ हो तो हाथ बाँयीं तरफ जायगा।

उदाहरण—**'गर्भधम्'** (रुद्री १। १)

(ग) वामगामी उदात्त—

मन्त्रारम्भका वर्ण जो अनुदात्त चिह्न (नीचे तिरछी रेखा)-से पूर्व हो तो हाथ बाँयी ओर जायगा।

उदाहरण—**'य एतावन्तश्च'** (रुद्री ५। ६३)

इस प्रकार दो प्रकारका ऊर्ध्वगामी और तीन प्रकारका वामगामी उदात्त स्वर होता है, इसके ऊपर या नीचे कोई चिह्न नहीं रहता।

अनुदात्तके पाँच भेद

अनुदात्त स्वरके नीचे तिरछी रेखा (क इस प्रकार) रहती है। अनुदात्त स्वके पाँच भेद हैं। यथा—१-निम्नगामी, २-अन्त्यदर्शी, ३-दक्षगामी, ४- तिर्यग्दर्शी और ५- अन्तर्गामी। इनका विवरण—

१-निम्नगामी अनुदात्त—'अनुदात्त, उदात्त और स्वरित'—इस क्रमसे वर्ण हो तो अनुदात्त चिह्नमें हाथ नीचे जायगा।

उदाहरण—**'गणानान्त्वा'** (रुद्री १। १)

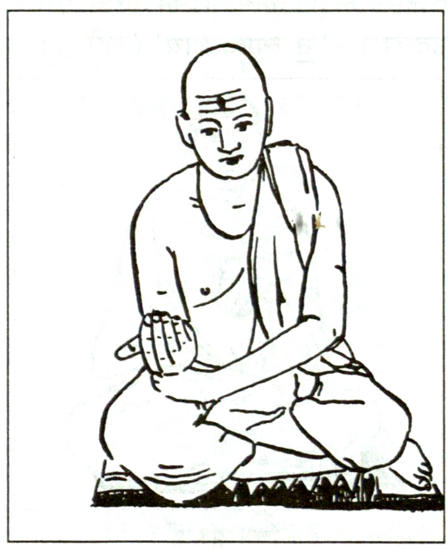

चित्र सं० ४

२-अन्त्यदर्शी अनुदात्त—अनेक अनुदात्त स्वर (निम्न रेखावाले) हो तो अन्तिम अनुदात्तमें हाथ नीचे जायगा।

उदाहरण—**'ब ल विज्ञाय स्थविरः'** (रुद्री ३। ५)

[निम्नगामी एवं अन्त्यदर्शी—इन दोनों अनुदातोंका चित्र सं० ४ में ही अन्तर्भाव है।]

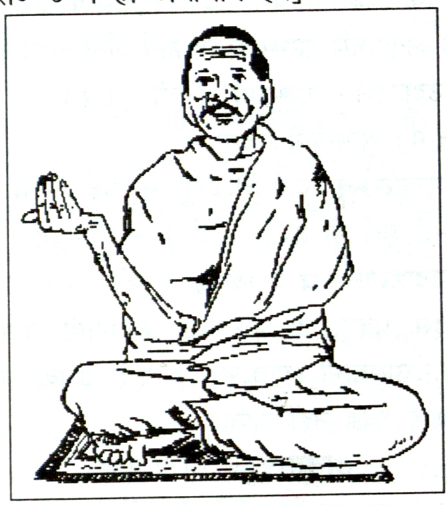

चित्र सं० ५

३-**दक्षगामी अनुदात्त**—'अनुदात्त, उदात्त और अनुदात्त', इस क्रमसे स्वर हो तो प्रथम अनुदात्तमें हाथ दाहिनी ओर जायगा।

उदाहरण— '**पङ्क्त्या सह**' (रुद्री १। २)

४-**अन्तर्गामी अनुदात्त**—यदि मध्यावर्ती स्वर (जिस स्वरके नीचे चार '४' अङ्क अथवा 'L' यह चिह्न हो, वह 'मध्यावर्ती' कहा जाता है)-से अव्यवहित पूर्व अनुदात्त स्वर हो तो हाथ पेटकी तरफ घूम जायगा।

उदाहरण— '**च व्युप्तकेशाय**' (रुद्री ५। २९)

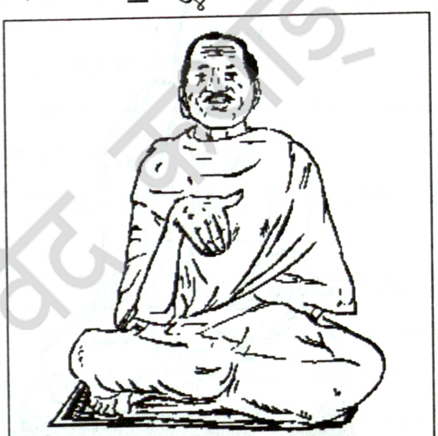

चित्र सं० ६

५-**तिर्यग्दर्शी अनुदात्त**—यदि अनुदात्तसे परे 'न्यूज' चिह्न (ɯ) हो तो अनुदात्तमें हाथ पिण्डदानके समान दाहिनी ओर झुकेगा।

उदाहरण— '**बृहत्युष्णिहा**' (रुद्री १। २)

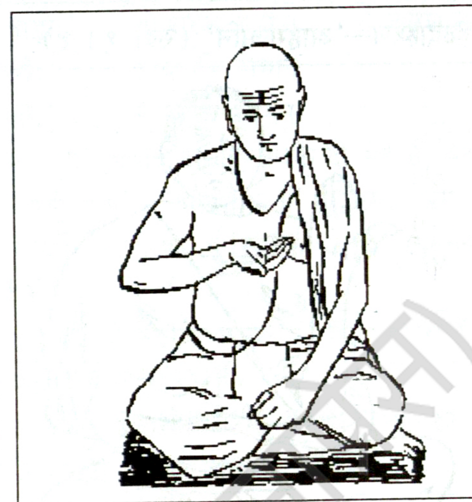

चित्र सं० ७

स्वरितके पाँच भेद

स्वरित स्वरके निम्नलिखित पाँच भेद होते हैं—१-मध्यपाती, २-मध्यदर्शी, ३-मध्यावर्ती, ४-पूर्णन्युब्ज और ५-अर्धन्युब्ज। इसका मुख्य चिह्न (।) वर्णके ऊपर खड़ी रेखा होती है।

१-**मध्यपाती स्वरित**—जहाँ स्वरित चिह्न (खड़ी रेखा), हो वहाँपर हाथ मध्यमें (हृदयकी सीधमें) जाता है।

उदाहरण— '**गणाना त्वा**' (रुद्री १। १)

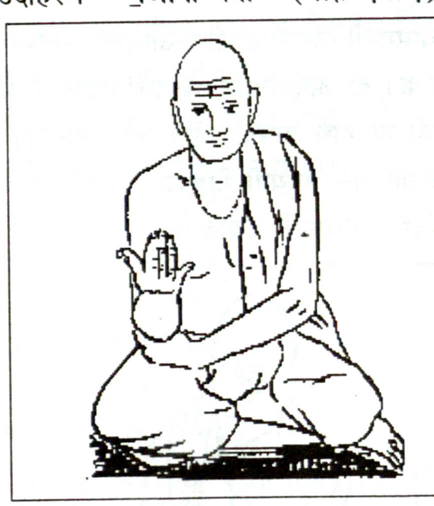

चित्र सं० ८

२-**मध्यदर्शी स्वरित**—स्वरित वर्णके बाद बिना चिह्नके वर्ण 'प्रचय' संज्ञक होते हैं और वे स्वरितके स्थानमें ही दिखाये जाते हैं, इनपर कोई चिह्न नहीं होता।

उदाहरण— '**गणपतिं ॡ हवामहे**' (रुद्री १। १)

३-**मध्यावर्ती स्वरित**—(चिह्न 'L' या ४ वर्णके नीचे होता है।) जिस पदमें वर्णके नीचे 'L' अथवा ४ यह

चिह्न हो, उसके पूर्वमें अनुदात्त चिह्न अवश्य रहेगा। वहाँ हाथ छातीके सामने रहकर अनुदात्त चिह्नमें भीतरकी ओर घूमेगा और मध्यावर्ती स्वरित चिह्नमें पूरा घुमाव करके बाहर आयेगा।

उदाहरण— '**च व्युप्तकेशाय**' (रुद्री ५। २९)

४-पूर्णन्युब्ज स्वरित—(चिह्न 'ɯ' यह है) अनुदात्त स्वरसे आगे वर्णके नीचे 'ɯ' यह चिह्न हो तथा उसके आगे अचिह्न वर्णके बाद 'मध्यपाती' स्वरित चिह्न '।' हो तो न्युब्जबोधी चिह्न 'ɯ' में हाथ नीचेकी ओर उलट जायगा।

उदाहरण— '**बृहत्युष्णिहा**' (रुद्री १। २)

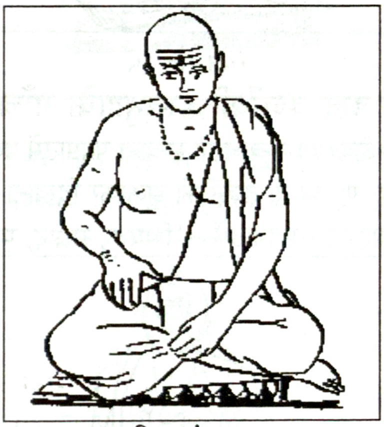

चित्र सं० ९

५-अर्धन्युब्ज स्वरित—(चिह्न ɯ) अनुदात्त चिह्नके आगे 'ɯ' यह चिह्न हो और उसके आगे अचिह्न वर्णके बाद अनुदात्त चिह्न हो तो न्युब्जबोधी चिह्नमें हाथ दाहिनी ओर उलटा किया जायगा।

उदाहरण— '**रथ्यो न रश्मीन्**' (रुद्री १। ४)

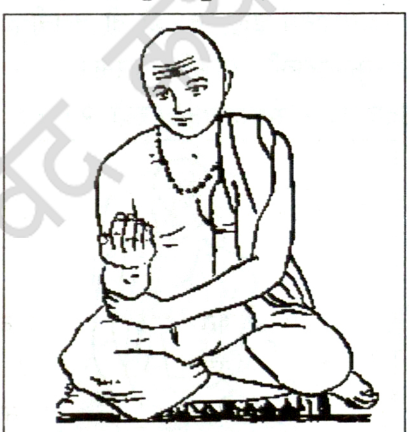

चित्र सं० १०

विशेष—'**न्युब्ज**' चिह्नमें अग्रिम स्वरोंके सहयोगसे हाथ नीचे या दाहिनी ओर जाता है। (१) अधोगामी पूर्णन्युब्जके उदाहरणके अनुदात्तमें नीचेकी ओर पिण्डदानके समान हाथ झुकेगा। (२) दक्षगामी अर्धन्युब्जके उदाहरणके अनुदात्तमें हाथ दाहिनी ओर जाकर पिण्डदानके समान झुकेगा।

विसर्गकी हस्तमुद्राएँ—

विसर्गमें ये तीन चिह्न होते हैं—

१-विसर्ग—[क] जहाँ विसर्गके मध्यकी रेखा ऊपरकी ओर अंकित हो और ऊर्ध्वगामी उदात्त हो तो वहाँपर तर्जनी अँगुली ऊपरकी ओर करना।

उदाहरण— '**आशुःशिशानो**' (रुद्री ३। १)

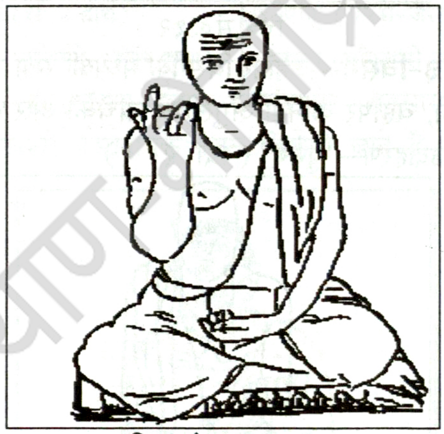

चित्र सं० ११ (क)

[ख] और यही विसर्ग यदि वामगामी उदात्तके बाद हो तो बायीं ओर हाथ रखते हुए तर्जनी अँगुली बाहर निकालना।

उदाहरण— '**सहस्राक्ष?**' (रुद्री २। १)

चित्र सं० ११ (ख)

२-विसर्ग—जहाँ विसर्गके मध्यमें तिरछी रेखा हो वहाँपर कनिष्ठा और तर्जनीको सीधी रखते हुए मध्यमा और अनामिकाको हथेलीकी तरफ मोड़ना।

उदाहरण— **'सूचीभि÷'** (रुद्री १। २)

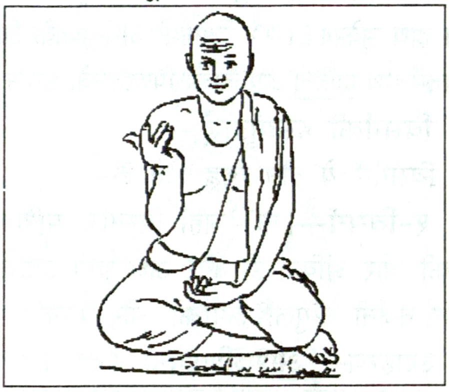

चित्र सं० १२

३-विसर्ग—जहाँपर विसर्गके मध्यकी रेखा नीचेकी ओर हो, वहाँपर कनिष्ठा अँगुलीको नीचेकी ओर करना।

उदाहरण— **'पुरुष'** (रुद्री २। १)

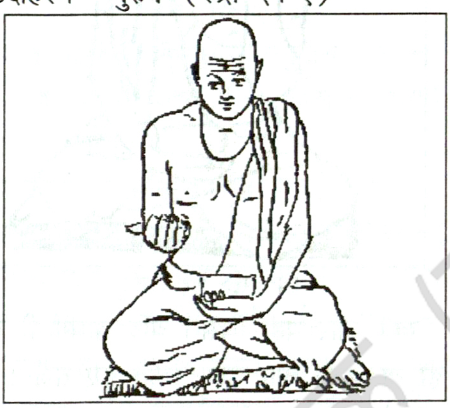

चित्र सं० १३

अनुस्वारकी मुद्राके दो भेद—

१-अनुस्वार—जहाँ अनुस्वारको **'ꣳ'** इस रूपमें दिखाया गया हो, वह एकमात्रिक या लघु है, वहाँ तर्जनी अँगूठा मिलाना चाहिये।

उदाहरण— **'छन्दाꣳसि'** (रुद्री २। ७)

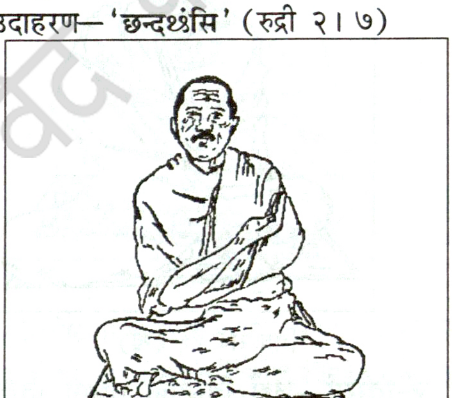

चित्र सं० १४

२-अनुस्वार—जहाँपर **'ꣷ'** इस रूपमें दिखाया गया हो, वहाँपर केवल तर्जनी सीधी करके दिखाना चाहिये।

उदाहरण— **'सभूमिꣷ'** (रुद्री २। १)

चित्र सं० १५

अन्तिम हल् वर्णोंकी हस्तमुद्राके पाँच भेद—

१-अवसान मन्त्रार्ध या मन्त्रान्त पदपाठमें पदान्तमें हल् 'क्, ट्, ङ्, ण्' हो तो तर्जनीको झुकाकर दिखाना चाहिये।

उदाहरण—पदपाठमें— **'भिषक्, सम्राट्, पाङ्, वृषण्'**

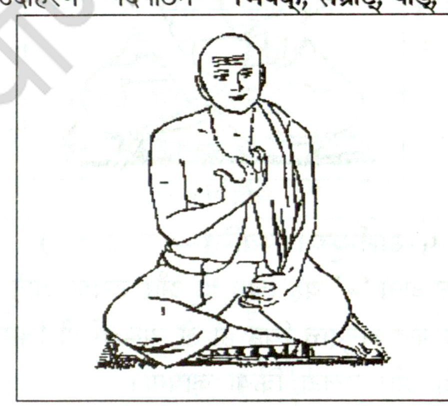

चित्र सं०१६

२-अवसानमें हल् 'त्' हो तो तर्जनीको अँगूठेसे मिलाकर कुण्डलकी आकृति करना।

उदाहरण— **'सहस्रपात्'** (रुद्री २। १)

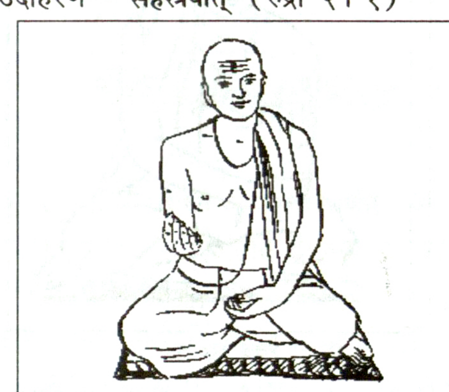

चित्र सं० १७

३-अवसानमें हल् 'न्' हो तो तर्जनीके बगलसे अँगूठाके नखका स्पर्श करना।

उदाहरण— **'रश्मीन्'** (रुद्री १। ४)

चित्र सं० १८

४-अवसानके हल् 'म्' में मुट्ठी बाँधकर दिखाना। उदाहरण— **'गर्भधम्।'** (रुद्री १। १)

चित्र सं० १९

५-अवसानके हल् 'प्' में पाँचों अँगुली मिलाना। उदाहरण— पदपाठमें **'ककुप्'**

चित्र सं० २०

वर्जित हस्तमुद्रा

आजकल प्राय: देखा जाता है कि अधिकतर स्वरसञ्चालन शिक्षारहित कर्मठवृन्द मिथ्या-रूपाकृतियुक्त हस्तमुद्राका प्रदर्शन करते हैं, अत: कम-से-कम शुद्धरूपसे हस्तमुद्राके स्वरूपका ज्ञान होनेमें सहायक हो, इसलिये वर्जित हस्तमुद्राके स्वरूप भी बतलाये जाते हैं। जैसा कि शास्त्रमें उल्लेख है—

चुलुर्नौका स्फुटो दण्डः स्वस्तिको मुष्टिकाकृतिः।
परशुर्हस्तदोषाः स्युस्तथाङ्गुल्या प्रदर्शनम्॥

(सम्प्रदाय प्रबोधिनी शिक्षा)

१-चुलु (चुल्लू— आचमनमुद्रा)	५-स्वस्तिक (अभय मुद्रा)
२-नौका (नौकाके समान हाथ)	६-मुष्टिक (मुट्ठी बंद हाथ)
३-स्फुट (सीधा हाथ)	७-परशु (फरसे-जैसा हाथ)
४-दण्ड (चपेटाके समान हाथ)	८-तर्जन (अँगुलीसे स्वरप्रद)

—इन ऊपर लिखे विवरणके अनुसार नीचे क्रमिकरूपसे हस्तदोषके चित्र दिखाये जाते हैं—

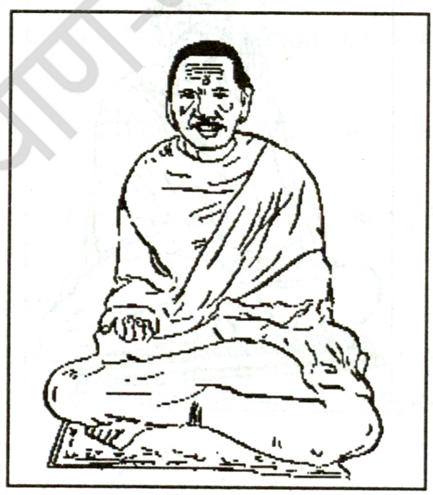

हस्तदोष १-चुलु

हस्तदोष २-नौका

हस्तदोष ३-स्फुट

हस्तदोष ४-दण्ड

हस्तदोष ५- स्वस्तिक

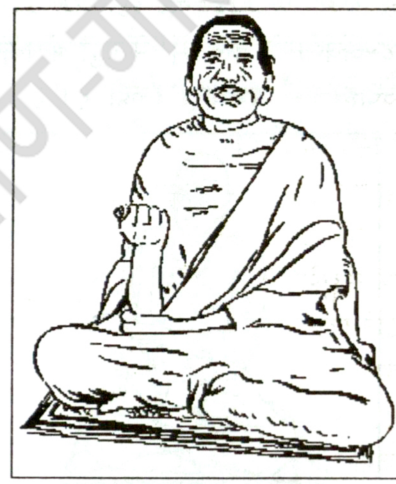

हस्तदोष ६-मुष्टिक

हस्तदोष ७-परशु

हस्तदोष ८-तर्जन

वेद कथाङ्क (कल्याण-गीताप्रेस)

सामगानकी संक्षिप्त विधि

सामवेद संहिताके दो भाग हैं—प्रथम भाग 'आर्चिक' या 'पूर्वार्चिक' है दूसरा 'उत्तरार्चिक' है। दोनोंमें मन्त्र-संख्या १,८१० है। यदि एक ही मन्त्र जो कि दो बार आया है, उसको छोड़ दें तो केवल १,५४९ ही मन्त्र हैं। सब मन्त्र ऋग्वेदके हैं, उनमें ७५ स्वतन्त्र हैं। पूर्वार्चिकमें ५८५ ऋचाएँ हैं। इसके बाद एक आरण्यकाण्ड है, उसमें ५५ मन्त्र हैं। उसके बाद 'महानाम्नी आर्चिक' है, तत्पश्चात् 'उत्तरार्चिक' है उसमें १२३५ मन्त्र हैं।

सामका अर्थ है 'गान' या 'संगीत'। '**ऋचि अध्यूढꣳ साम गीयते।**' ऋचाके आधारपर ही सामका गान होता है। उत्तरार्चिकमें प्रायः ४०० 'प्रगाथ' अर्थात् गेय सूक्त हैं। पूर्वार्चिकमें अग्नि, इन्द्र, सोम देवताओंकी ऋचाएँ हैं। इनमें ग्रामगेय (जो ग्राममें गाये जायँ) और आरण्यगेय (जो वनमें गाये जायँ)-का वर्णन है। आरण्यगेयको 'रहस्यगेय' भी कहते हैं।

दो ऋचाओंके समूहको 'प्रगाथ' कहते हैं। ऊहगान—ग्रामगेयके तथा ऊह्यगान—आरण्यगेयके विकृति-गान कहे जाते हैं। सामवेद आर्चिकमें स्वर उदात्त[1] अनुदात्त[3] और स्वरित[2] के अङ्कसे दिखाये जाते हैं। दो अनुदात्त (३) चिह्नोंके मध्यमें रहनेवाला उदात्त (२) अङ्कसे दिखाया जाता है तथा ओंकारको सामवेदी 'उद्गीथ' कहते हैं। इन गानोंमें अक्षरोंके ऊपर—१, २, ३, ४, ५—इन अङ्कोंसे संगीतके स्वरोंका निर्देश किया जाता है। प्रायः मन्त्रोंमें ५ ही स्वर लगते हैं। कुछ थोड़ी ऋचाओंमें ७ तक भी स्वर लगते हैं। इन सात स्वरोंका वंशीके ७ स्वरोंसे इस प्रकार सम्बन्ध है—

१-(म) मध्यम	२-(ग) गांधार
३-(रे) ऋषभ	४-(स) षड्ज
५-(नी) निषाद	६-(ध) धैवत
७-(प) पञ्चम	

इन्हीं स्वरोंके अनुसार उद्गाता लोग यज्ञोंमें सामगान करते हैं।

स्तोभ—ऋचामें जो वर्ण नहीं हैं, उन्हें आलापके लिये जोड़कर गान करना ही 'स्तोभ' कहलाता है। स्तोभ अनेक हैं। यथा—औ हो वा। हा उ। ए हाऊ। होयि। औहोइ। ओहाइ आदि।

अनेक ऋषियोंने मन्त्रोंका अपने ढंगसे या लयसे गान किया, वे गीतियाँ उन्हींके नामसे प्रसिद्ध हुईं। जैसे— वामदेव्य, माधुछन्दस, श्यैत, नौधस आदि इनके अनेक नाम हैं। सामगानका उदाहरण—

३१२　३२　३२३　१२　३१२　३१२३　१२

अहमस्मि प्रथमजा ऋतस्य पूर्व देवेभ्यो अमृतस्य नाम।

२ ३　१२३ २उ ३१२　३२उ ३१२　३१२

यो मा ददाति स इदेवमावदहमन्नमन्नमदन्तमद्मि॥ ५९४॥

इस ऋचाके सामगानका विस्तार—

२र र　र　१रर　२　२१

हाउ हाउ हाउ। सेतूंः स्तर। (त्रिः)। दुस्त। रान् (द्वे त्रिः)

र२र१रर२

दानेनादानम्। (त्रिः)।

र　र　र　र१　२　१११

हाउ हाउ हाउ। अहमस्मिप्रथमजाऋताऽ२३स्याऽ३४५॥

२र　र　र १रर　२　१

हाउ हाउ हाउ सेतूंः स्तर। (त्रिः) दुस्त। रान् (द्वे त्रिः)।

र२र　१र२र　१र　२र　र

अक्रोधेनक्रोधम्। (द्विः) अक्रोधेनक्रोधम्। हाउ हाउ

र　र　र र र　१　२　१११

हाउ। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्यनाऽ२३ माऽ ३४५॥

२र र र　१रर　२　१

हाउ हाउ हाउ। सेतूंः स्तर। (त्रिः)। दुस्त। रान् (द्वे त्रिः)।

२　१र २र

श्रद्धयाऽश्रद्धाम् (त्रिः)।

र　र　र　र र र　र१　२ १ १ १

हाउ हाउ हाउ। योम ददाति सईदेवमाऽ २३ वा ऽ३४५ त्॥

२र　र　र　१रर २

हाउ हाउ हाउ। सेतूंःस्तर। (त्रिः)।

१　२१र　र २　र र र

दुस्त। रान्। (द्वे त्रिः)। सत्येनानृतम्। (त्रिः)। हाउ हाउ हाउ।

१　२　१११　२ऽ　ऽ ऽ

अहमन्नमन्नमदन्तामाऽ २३ द्मीऽ ३४५। हाउ हाउ हाउ वा॥

र१र

एषागतिः (त्रिः)।

२र१२१　१　२　१र२

एतदमृतम्। (त्रिः)। स्वर्गच्छ। (त्रिः)। ज्योतिर्गच्छ। (त्रिः)।

१रर　२र　१र२१　१११

सेतूंः स्तीर्त्वा चतुरा २३४५॥

किसी भी मन्त्रको सामगानमें गानके उपयुक्त करनेके लिये नीचे लिखे आठ प्रकारके विकारोंका भी प्रयोग किया जाता है—

सं०संज्ञा विवरण उदाहरण

१-विकार—एक वर्णके स्थानमें दूसरा बोलना **'अग्ने=ओग्नायि'**

२-विश्लेष—सन्धिका विच्छेद करना **'वीतये=वोयि तोया २ यि'**

३-विकर्षण—लम्बा खींचना **'ये=या २३ यि'**

४-अभ्यास—बार-बार उच्चारण करना **'तो या २ यि, तोया २ यि'**

५-विराम—पदके मध्यमें भी ठहरना—**'गृणानो हव्यदातये= गृणानोहा व्यदातये'**

६-स्तोभ—निरर्थक वर्णका प्रयोग **'औ हो वा, हा उ, हावु'**

७-आगम—अधिक वर्ण-प्रयोग **'वरेण्यम्=वरेणियोम्'**

८-लोप—वर्णका उच्चारण न करना **'प्रचोदयात्=प्रचो ऽ१२ऽ१२। हुम्। आ २। दायो। आ ३४५**

नीचे लिखे मन्त्रमें इन आठ विकारोंका उदाहरण देखिये। मूल-मन्त्र ऋग्वेदमें इस प्रकार हैं—

'अ॒ग्न आयाहि वी॒तये गृ॒णानो हव्यदातये।' निहोता'। सत्सि-बर्हिषि॥ (ऋग्वेद ६।- १६।- १०)।

सामगानके प्रयोगमें यही मन्त्र—

१ ४ २र २र १ - १- १र २र

ओं। ओऽग्नाई॥ आयाहिऽ३ वाइतोयाऽ२इ। तोयाऽ२इ। गृंणानोह।

१ १ १ २र १

व्यादातोयाऽ२इ। तोयाऽ२इ॥ नाइहोता साऽ२३॥

५रर ३ ५

त्साऽ२इबा २३४ औहोवा। ही ऽ२३४ षी

इस प्रकार संक्षेपमें सामगानकी रूपरेखा दिखायी गयी है।

ऋक् तथा यजुर्वेदमें उदात्त, अनुदात्त और स्वरित इनमेंसे उदात्तको चिह्नरहित रूपसे और अनुदात्तको वर्णके नीचे तिरछी रेखा तथा स्वरितवर्णको ऊपर खड़ी रेखासे अङ्कित किया जाता है। किंतु सामवेदमें यही मन्त्र संहितामें इस प्रकार लिखा जाता है—

२३ १ २ ३१२ ३२ ३१२ १ २र

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि

३१२

ब॒र्हिषि॥ (सामवेद ६६०)

सामगानके विशेष चिह्न—

१-सामवेदमें कहीं-कहीं वर्णोंपर 'र' 'क' और 'उ'-के चिह्न देखे जाते हैं। उनका तात्पर्य यह है कि जब दो उदात्त एकत्र हो जाते हैं, तब पहले उदात्तके ऊपर २ का अङ्क लगता है और दूसरा बिना चिह्नके ही रहता है। परंतु इस दूसरे उदात्तके आगेवालेपर रकारसहित २ का अङ्क लगेगा।

२-अनुदात्तके बादके स्वरितपर भी '२र' यही चिह्न होता है, किंतु तब स्वरितके पहले अनुदात्तपर '३क' यह चिह्न होता है।

३-यदि दो उदात्त सन्निकृष्ट हों और बादमें अनुदात्तस्वर हो तो प्रथम उदात्तके ऊपर '२उ' यह चिह्न दिया जाता है और दूसरा स्वर चिह्नरहित होता है।

वेदपाठकी रक्षा एवं आवश्यकता—

वेदपाठके सम्बन्धमें हमारे धार्मिक कृत्य (कर्मकाण्ड)-में यजुर्वेदकी हस्तस्वर-प्रक्रिया और सामवेदकी गान-शैली—ये दोनों प्रकार ही आजकल अति कठिन होनेके कारण दिन-प्रतिदिन क्षीण होते जा रहे हैं। सम्प्रति इस कठिन समयमें सर्वसाधारणको बड़े-बड़े यज्ञ-यागादि देखनेका अवसर ही यदा-कदा प्राप्त होता है और कभी कदाचित् यदि देखते भी हैं तो उनके लिये एक खेल-सा ही रहता है। इसीलिये इस आजीविकासे जीवन-यापन करनेवाले हमारे पूज्य कर्मठ याज्ञिकवृन्द भी इस अति आवश्यक शिक्षा-ग्रहणमें शिथिल होते जा रहे हैं। अतः सर्वसाधारण चाहे स्वयं यथावत् शिक्षा ग्रहण न भी करें तो भी अपनी अमूल्यनिधिका ज्ञान तो कम-से-कम होनी चाहिये, क्योंकि वेदोच्चारणका यह आर्ष प्रकार है। यद्यपि वर्तमानमें बहुत श्रद्धालु नहीं हैं, जो इस कठिन परिपाटीमें पड़ना पसन्द करें, पर सनातनधर्म महान् है, आज भी श्रद्धालुओंकी कमी नहीं है। क्या बिना श्रद्धाके ही बदरी, केदार आदिकी महाकठिन एवं अति व्ययसाध्य यात्रा प्रतिवर्ष लाखों मनुष्योंद्वारा होना सम्भव है? इसी प्रकार कुम्भ आदि पर्वपर पचासों लाख जनसमूहका समवेत होना भी इसका प्रमाण है तथा दूसरा प्रयोजन यह भी है कि इस शिक्षाकी इच्छावाला विद्यार्थी गुरूपदिष्ट शिक्षाको इसकी सहायतासे सहजमें हृदयङ्गम करता हुआ अभ्यास कर सके। इससे पाठक और विद्यार्थी दोनोंको ही सरलता होगी, पाठको बारम्बार आलोडनके परिश्रमसे मुक्ति मिलेगी और विद्यार्थी इसके द्वारा अपने विस्मृत स्वरका ज्ञान प्राप्त कर सकेगा। वेदसाहित्य-विषयक ज्ञातव्य विषय तो महान् है, किंतु नित्य-नैमित्तिक और काम्य कर्म तथा देवपूजा आदिमें व्यवहृत होनेवाले वेदमन्त्रोंका यथाविधि पाठ करनेकी इच्छावाले श्रद्धालु धार्मिकोंके लिये यह एक सरणि या दिग्दर्शन है।

हम चाहते यही हैं कि शिक्षाप्राप्त वेदपाठीका यथायोग्य सत्कार हो और धार्मिक जनोंको धर्मकी प्राप्ति हो। वेदपाठके विषयमें यह सर्वजन-विदित है कि उपनीत द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य)-मात्र इसके अधिकारी है, द्विजमात्रका यह परम धर्म है, अतः वेदज्ञान अवश्य प्राप्त करना चाहिये।